राष्ट्रीय सहारा, नई दिल्ली, मंगलवार, 13 जनवरी 2009

सरकारी नीतियों में उपेक्षित पर्यावरणीय सरोकार

हालांकि हाल के वर्षों में पर्यावरण संबंधी काफी जागृति आई है और सरकारी स्तर पर भी विभिन्न प्रोजेक्टों के पर्यावरणीय दृष्टि से आकलन संबंधी निर्देश निकले हैं, फिर भी कुल मिलाकर पर्यावरणीय सरोकार अभी सरकारी नीतियों के हाशिए पर ही हैं। यदि समग्रता में नीतियां पर्यावरण को तबाह करने वाली हों और थोड़ा-बहुत पर्यावरणीय आकलन की भी बात कर ली जाए तो इससे पर्यावरण का विनाश नहीं रुक सकेगा। दूसरी ओर कुछ स्थानों पर तथाकथित पर्यावरणीय सरोकार बहुत आगे तो बढ़ गए हैं पर यह जन-विरोधी तरीकों से हुआ है। जिस तरह वन्य जीव संरक्षण के नाम पर या शहरी प्रदूषण कम करने के नाम पर बड़ी संख्या में लोगों को, उनकी रोजी-रोटी को कई बार उजाड़ा गया है, उससे आम लोगों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति अलगाव व विरोध उत्पन्न होता है जबकि पर्यावरण संरक्षण का कार्य लोगों के सहयोग से ही सफल हो सकता है। फिर इस बात की भी कोई गारंटी नहीं है कि जबरदस्ती बेरोजगार किए गए लोग मजबूरी में पर्यावरण को क्षति वाले कार्य नहीं अपनाएंगे।

अब जरूरत इस बात की है कि पर्यावरण की नीतियों में ऐसे बदलाव किए जाएं जिससे लोगों को टिकाऊ आजीविका के नए अवसर मिलने लगें। इसके साथ ही देश में पर्यावरण के संरक्षण के कार्य को सरकारी नीतियों व कार्यक्रमों के हाशिए से हटाकर इनके केन्द्र में लें आना चाहिए। यदि हमारा देश इस नये वर्ष में इस तरह की शुरुआत बहुत सुलझे-समझे ढंग से कर सके तो वह विश्व के सामने एक बहुत अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत कर सकता है जो जलवायु बदलाव जैसे गंभीर पर्यावरणीय संकटों के दौर से गुजर रहे विश्व की मांग भी है।

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में सरकार को उच्चतम प्राथमिकता उन कार्यों को देनी चाहिए जिनसे गांववासियों के लिए पर्यावरण संरक्षण और आजीविका संरक्षण में समन्वय बनाना सरल हो जाए। अतः सरकार को गांव में तथा गांव के आसपास जल-संरक्षण व हरियाली बढ़ाने पर अधिक ध्यान देना चाहिए

भारत को निकट भविष्य में लाखों एकड़ भूमि को हरा-भरा बनाने की ऐसी योजना अपनानी चाहिए जो बहुत व्यापक जन-सहयोग पर आधारित हो। वन विभाग के पास ऐसी बहुत सी भूमि है जो वृक्ष-विहीन है। इस भूमि को गांववासियों-आदिवासियों के ऐसे समूहों को सौंप देना चाहिए जो इसमें स्थानीय प्रजातियों के वृक्ष लगाएं। इन वृक्षों की प्रजातियों का चुनाव इस प्रकार होना चाहिए कि यह हरियाली प्राकृतिक वनों की हरियाली के नजदीक आ सके। इस भूमि का स्वामित्व बेशक वन विभाग का ही बना रहे पर विभाग अपने सहयोगी लोगों को यह गारंटी देगा कि जब तक वे हरियाली को भली-भांति बढ़ा रहे हैं और वृक्षों की रक्षा कर रहे हैं तब तक विभाग उनको हटाएगा नहीं। जब वृक्ष बढ़ जाएंगे तो इनकी लघु वन-उपज पर उन्हें पालने-पोसने वाले लोगों का पूरा अधिकार होगा। यह उनकी आजीविका का आधार होगा। जब तक वृक्ष बढ़ रहे होंगे तब तक लोगों को विभिन्न निर्धनता उन्मूलन व वनीकरण की सरकारी योजनाओं के अंतर्गत सहायता की जाएगी और जब तक पौधे छोटे हैं तब तक लोग साथ-साथ थोड़ी बहुत कृषि भी कर सकेंगे। इस योजना के लिए चुनाव में गरीब लोगों को प्राथमिकता दी जाएगी व प्रति परिवार लगभग 5 एकड़ भूमि की व्यवस्था होगी। जल संरक्षण कार्य यहां साथ-साथ होंगे।

इसी तरह जहां वन पहले से मौजूद हैं पर बुरी तरह क्षत-विक्षत हो रहे हैं वहां भी प्रति परिवार लगभग 5 एकड़ भूमि आदिवासियों-गांववासियों को सौंपी जा सकती है। वे वनों की क्षति को रोकेंगे और बदले में लघु वन उपज का पूरा अधिकार प्राप्त करेंगे।

वन्य जीव संरक्षण का अधिकांश बजट इस तरह खर्च होना चाहिए कि स्थानीय लोगों विशेषकर आदिवासियों को वन्य जीवों की रक्षा की जिम्मेदारी मिले। वैसे भी शिकारियों को दूर रखने की जिम्मेदारी को सबसे अच्छी तरह वे ही निभा सकते हैं। लोगों को वन्य जीव संरक्षण के नाम पर विस्थापित न किया जाए अपितु इस कार्य से उन्हें जोड़ कर रोजी-रोटी के नए अवसर उपलब्ध करवाए जाएं।

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में सरकार को उच्चतम प्राथमिकता उन कार्यों को देनी चाहिए जिनसे गांववासियों के लिए पर्यावरण संरक्षण और आजीविका संरक्षण में समन्वय बनाना सरल हो जाए। अतः सरकार को गांव में तथा गांव के आसपास जल-संरक्षण व हरियाली बढ़ाने पर अधिक ध्यान देना चाहिए। पेड़ों का चुनाव गांववासियों के लिए उपयोगिता, मिट्टी व जल-संरक्षण को विशेष ध्यान में रखकर होना चाहिए और स्थानीय प्रजातियों को प्राथमिकता मिलनी चाहिए। सरकारी नीतियों में परंपरागत तकनीकों की अच्छी समझ बनाने व परंपरागत बीजों का संचय कर उसे किसानों को उपलब्ध करवाने पर भी ध्यान देना चाहिए। नहरों, कुओं, परंपरागत जल-स्रोतों की सफाई व मरम्मत का कार्य अच्छी तरह होना चाहिए। जहां तक आधुनिक तकनीक का सवाल है तो उसका उपयोग सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा के प्रसार व बायो गैस को बेहतर करने में हो सकता है।

यदि सरकार इन कार्यों को निष्ठा व जन-सहयोग से करे तो पर्यावरण के अनुकूल तौर-तरीकों से खाद्य-उत्पादन बढ़ाने व कुपोषण दूर करने की बहुत अच्छी शुरुआत हो सकती है। कृषि उत्पादन बढ़ाने का कार्य परंपरागत बीजों व गांव में पत्ती-गोबर आदि से तैयार निशुल्क खाद से होना चाहिए। पशुधन, विशेषकर गोधन को, उनको स्थानीय प्रजातियों को बहुत महत्व मिलना चाहिए। कीड़ों के प्रकोप को कम करने के लिए नीम जैसी पत्तियों के रस व तरह-तरह की जैव-विविधता बनाए रखने पर जोर देना चाहिए। कृषि-उपज विशेषकर धान, तिलहन के प्रसंस्करण के ऐसे लघु व कुटीर उद्योग विकसित होने चाहिए जिनसे इन खाद्यों के पौष्टिक तत्त्वों की अधिकतम रक्षा कर सकें। जेनेटिकली मॉडिफाइड (जीएम) खाद्यों व फसलों पर कड़ी रोक भी लगानी होगी।

यदि हम पर्यावरण संरक्षण की ऐसी नीतियां अपनाएं तो हम विश्व में सबसे तेजी से हरियाली बढ़ाने वाले देश के रूप में तथा सबसे स्वास्थ्यवर्धक भोजन व जड़ी-बूटियों की उपलब्धि के देश के रूप में शीघ्र ही विख्यात हो जाएंगे। इस आधार पर जलवायु बदलाव के संकट को दूर करने के नाम पर जो करोड़ों डालर के फंड प्राप्त हो सकते हैं, उन पर सबसे अधिक अधिकार हमारा बनेगा। स्वास्थ्यवर्धक खाद्यों के निर्यात का बड़ा बाजार हमारे लिए खुल जाएगा, पर हम भारतवासियों की भूख और कुपोषण को दूर करने के बाद ही निर्यात करेंगे। इस तरह पर्यावरण को केन्द्र में रखकर हमें ऐसी नीतियां अपनानी चाहिए जो पर्यावरण की रक्षा, गरीबी दूर करने व विश्वव्यापी आर्थिक संकट से हमारी रक्षा के उद्देश्यों को एक साथ प्राप्त करें।